2 जुलाई 2017, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 JaipurCity / 224 / 2015-17

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे
जिनवाणी चैनल पर
जिनवाणी JINVANI सुख, शान्ति, समृद्धि
प्रतिदिन
प्रातः 6.30 से 7.00 बजे तक

वर्ष : 40, अंक : 7 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये
जुलाई (प्रथम), 2017 (वीर नि. संवत्-2543) सह-सम्पादक : **डॉ. संजीवकुमार गोधा व पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

जयपुर में विभिन्न स्थानों पर -

जैन संस्कार शिविर संपन्न

जयपुर (राज.) : (1) यहाँ दिगम्बर जैन मन्दिर जनता कॉलोनी में दिनांक 21 से 31 मई तक पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ, पण्डित सौरभजी शास्त्री, श्रीमती चन्द्रादेवी द्वारा छहढाला, बालबोध पाठमाला भाग 1 व 2 की कक्षाओं के माध्यम से बालकों में जैनधर्म के संस्कार डाले गये। इस अवसर पर श्रीमती नीलमजी जैन का विशेष सहयोग रहा।

(2) श्री मुलतान दिगम्बर जैन समाज के तत्त्वावधान में मुलतान महिला मण्डल द्वारा दिनांक 4 से 11 जून तक धार्मिक व नैतिक संस्कारों और जैनधर्म संबंधित ज्वलंत प्रश्नों के समाधान हेतु जैन वर्कशॉप का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर डॉ. श्रीयांसजी सिंघई जयपुर, पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ, पण्डित संजयजी सेठी जयपुर, पण्डित परेशजी शास्त्री जयपुर एवं डॉ. ज्योति सेठी जयपुर द्वारा लाभ मिला।

वर्कशॉप के अन्तर्गत संस्कार से ही संस्कृति की रक्षा, मंदिर क्यों और कैसे जाना चाहिये ?, जैनधर्म के सरल उपायों के द्वारा कैसे जीवन को सुख और शान्तिमय बना सकते हैं ?, जैनधर्म ही श्रेष्ठ क्यों है ?, अभिषेक-पूजन किसकी-क्यों, कैसे व कब करना और उसका महत्व क्या है?, स्वाध्याय व ध्यान से तनावमुक्त जीवन कैसे जीएं?, क्या मैं दु:खी हूँ? कैसे? सुखी होने का उपाय क्या है?, क्या धर्म करने से हम सुखी हो जाएंगे?, हमारा जैनधर्म वैज्ञानिक कैसे है?, पहले धर्म करना या समझना?, धर्म क्या है?, वस्तु-स्वातंत्र्य आदि सिद्धांत क्या हैं? आदि विषयों पर चर्चा की गयी।

संपूर्ण कार्यक्रम में श्री पंकजजी जैन का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ।

(3) मालवीय नगर सेक्टर-7 स्थित पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर में दिनांक 7 से 18 जून तक प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी श्री नथमलजी झांझरी परिवार के सहयोग से 18वें बाल संस्कार शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ, पण्डित मनीषजी शास्त्री खड़ैरी एवं श्रीमती वर्षा जैन द्वारा धार्मिक कक्षाओं का आयोजन हुआ।

टोडरमल महाविद्यालय का सुयश

समर्थ जैन

दुर्लभ जैन

विनय जैन

अत्यंत हर्ष के साथ सूचित किया जाता है कि श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय जयपुर के विद्यार्थियों ने वरिष्ठ उपाध्याय (बारहवीं) की परीक्षा में प्रथम तीन स्थान प्राप्त किये हैं, जिनमें समर्थ जैन विदिशा (88.6%) ने प्रथम स्थान, दुर्लभ जैन गुड़ाचन्द्रजी (88.4%) ने द्वितीय स्थान एवं विनय जैन मुम्बई (86%) ने तृतीय स्थान प्राप्त किया।

परीक्षा में कुल 42 विद्यार्थियों ने परीक्षा दी जिसमें से 37 विद्यार्थी प्रथम श्रेणी से एवं 5 विद्यार्थी द्वितीय श्रेणी से उत्तीर्ण हुये। इसके अतिरिक्त 14 विद्यार्थियों ने 80% से अधिक, 16 विद्यार्थियों ने 70% से अधिक तथा 7 विद्यार्थियों ने 60% से अधिक अंक प्राप्त किये हैं। ज्ञातव्य है कि समर्थ जैन ब्र. सुमतप्रकाशजी का भतीजा एवं दुर्लभ जैन डॉ.वीरसागरजी दिल्ली का भतीजा है। खनियांधाना (म.प्र.) में आयोजित प्रशिक्षण शिविर में दिनांक 25 मई को संकल्प दिवस के अवसर पर इन दोनों विद्यार्थियों को डॉ.हुकमचंदजी भारिल्ल के करकमलों से पुरस्कृत किया गया।

इसके अतिरिक्त आचार्य धरसेन महाविद्यालय कोटा एवं आचार्य अकलंक महाविद्यालय बांसवाड़ा के विद्यार्थियों का परीक्षा परिणाम भी शत-प्रतिशत रहा है।

सभी विद्यार्थियों को श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय परिवार एवं जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से हार्दिक बधाई एवं उज्ज्वल भविष्य की कामना।

दशलक्षण पर्व हेतु अपनी स्वीकृति शीघ्र भेजें

टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा दशलक्षण पर्व पर प्रवचनार्थ जाने वाले सभी विद्वानों से अनुरोध है कि वे इस वर्ष भी दशलक्षण पर्व में जाने हेतु अपनी स्वीकृति शीघ्र जयपुर कार्यालय को पत्र/फोन/ई-मेल द्वारा भेजें। यद्यपि सभी विद्वानों को जयपुर कार्यालय से अनुरोध पत्र डाक, एस.एम.एस./वॉट्सएप द्वारा भेजे जा रहे हैं; परन्तु यदि डाक की गड़बड़ी से समय पर न मिले हो तो भी अपनी स्वीकृति हमें शीघ्र नोट करा देवें। **- महामंत्री**

स्वीकृति भेजने का पता - **दशलक्षण पर्व व्यवस्था विभाग, ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.) 302015 फोन नं.-0141-2705581, 2707458, मो. 9785643202 (पीयूष जैन) E-mail : ptstjaipur@yahoo.com**

सम्पादकीय –

संस्कारों का महत्व

– पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

वह नौकरी तलाशते-तलाशते जब परेशान हो गया और कहीं कोई ढंग की नौकरी नहीं मिली तो वह भी 'वर्क इज वर्शिप' को याद करके मेहनत-मजदूरी करने लगा।

भले ही मेहनत-मजदूरी को लोग हल्का काम समझते हैं, इज्जत की दृष्टि से नहीं देखते; पर मेहनत-मजदूरी पराई गुलामी से तो लाखगुणी अच्छी ही है।

बस, यही सोचकर अपने मन को समझा-बुझाकर वे दोनों अपनी आजीविका आराम से कर रहे थे, पर दुर्दैव को यह भी रास नहीं आया।

जब सुनीता और सरला ने अन्नू और अज्जू के कहने पर अपने पतियों के पुराने मित्रों के नाते संजू और राजू को अपने घर में आश्रय दिया, तक तो वे कुछ समझ न सकीं कि इनको आश्रय देने का परिणाम इतना दु:खद हो सकता है। और जब समझ में आया तब तक बात बहुत आगे बढ चुकी थी, पानी सिर से गुजर चुका था। अत: अब उनका हटाना संभव नहीं रहा।

संजू और राजू के साथ रहने से अज्जू और अन्नू को भी सिगरेट और शराब पीने की आदत पड़ गई। पहले तो वे होली-दिवाली यदा-कदा शौकिया पिया करते थे, पर अब तो रोज-रोज पीने-पिलाने से व्यसन बन गया था, अत: अब पिये बिना चैन नहीं पड़ती थी। इस कारण अब उन्हें अलग-अलग करना आसान काम नहीं था।

ये दुर्व्यसन सेवन करने वाले अपने सगे माता-पिता, भाई-बहिन, पुत्र और पत्नी का साथ भले ही छोड़ दें, पर दमभाई का साथ नहीं छोड़ सकते। एक साथ बैठकर गाँजा-चरस, बीड़ी-तम्बाकू, भंग और मदिरापान करने वाले दमभाई के आगे सगे भाई की इन्हें कोई कीमत नहीं होती।

यद्यपि संजू व राजू का साथ सुनीता व सरला को ही सबसे अधिक महंगा पड़ा; क्योंकि एक तो उनके पति इनके साथ अधिक मात्रा में शराब और सिगरेट पीने से ही मौत के शिकार हुए। दूसरे इनके सम्पर्क में रहने से उनकी बदनामी हुई, सो अलग। पर वे करें तो करें भी क्या ?

पहले संजू और राजू इनकी शरण में आये और बाद में अन्नू और अज्जू उनके अनुराग में ऐसे फंसे कि अब ये स्वयं उनको छोड़ने की स्थिति में नहीं रहे। अत: सुनीता एवं सरला न चाहते हुए भी अपने पतियों को अन्नू और अज्जू से जीते जी अलग नहीं कर सकीं।

संजू और राजू को दिन-रात सुनीता व सरला के घर आते-जाते, रात-रातभर गपशप लगाते, तथा खाते-पीते और वहीं उठते-बैठते एवं सोते देखकर समाज की दृष्टि में ये दोनों तो दुराचारी बन ही गये, साथ में सुनीता और सरला भी इनकी वजह से बिना कारण बदनाम हो गई।

समाज क्या जाने इनके अंतरंग को; पर ध्यान रहे – बाप बेटे को धोखा दे सकता है, बेटा बाप को चकमा दे सकता है, पति पत्नी से झूठ बोल सकता है, पत्नी पति से बात छुपा सकती है; पर मित्र-मित्र के साथ दगा नहीं करता। चोर चोर से कुछ भी नहीं छुपाता, डाकू डाकू को कभी धोखा नहीं देता, जुआरी जुआरी के साथ कभी बेईमानी नहीं करता; व्यापारी वर्ग में यह कौन नहीं जानता कि नम्बर दो का करोड़ों का धन्धा केवल परस्पर के विश्वास के भरोसे ही चलता है। पक्की लिखा-पढी करने वाले भले ही फेल हो जाएँ, पर ये लोग आज तक तो कभी फेल होते देखे नहीं गये।

इसी तथ्य के आधार पर छाती ठोककर यह कहा जा सकता था कि संजू और राजू का व्यवहार सरला और सुनीता के साथ भाई-बहिन के पवित्र प्रेम की तरह था, उन्होंने उन्हें कभी भी बुरी निगाह से देखा तक नहीं था; क्योंकि अब वे उनकी प्रेमिकाएं नहीं, बल्कि मित्रों की पत्नियाँ जो थीं।

पर, समाज को कौन समझाये कि ये पवित्र हैं और समाज भी ऐसे कैसे मानता कि इन्होंने ऐसा कोई पाप नहीं किया। समाज का सोचना एक अपेक्षा से सच भी है; क्योंकि काजल की कोठरी में रहकर कोई उसके दाग से कैसे बच सकता है ?

पर वे भी क्या करें ? उनके पास सीता सती जैसा कोई अग्निपरीक्षा देने का उपाय भी तो नहीं है। वे सीताजी जैसा साहस कर भी नहीं सकती थीं; क्योंकि संभव है सीताजी जैसी पवित्रता होने पर भी सीताजी जैसा पुण्य उनके पास न हो और अग्नि का जल पवित्रता से नहीं पुण्य से होता है, अन्यथा पवित्रता तो पाँचों पाण्डवों के भी कम नहीं थी।

पाँचों ही पाँडव पंच महाव्रत के धारी थे, जिनमें तीन तो तद्भव मोक्षगामी भी थे। उनको भी अग्नि से तप्त लाल-लाल

दहकते लोहे के गहने पहना दिये गये थे। समझ लो कि उनके पास सीता जैसा पुण्य नहीं था, पवित्रता तो सीता से भी अनन्तगुणी अधिक थी। इसके सिवाय और कोई उपाय था नहीं। अत: चुपचाप बदनामी सहने में ही उन्हें सार दिखाई दिया।

पर, समाज भी तो आखिर समाज ही है, वह कब पीछे रहने वाला था। अन्नू और अज्जू के दिवंगत होने पर जैसे-जैसे ज्ञान, विज्ञान और विद्या ने उन्हें सन्मार्ग में लगाकर शान्ति से धर्मसाधन करते हुए गौरव से जीने को तैयार किया, वैसे-वैसे ही समाज ने उनका विरोध करना प्रारम्भ कर दिया। उनका बहिष्कार करने तक की योजना बन गई।

औरत औरत की जितनी बड़ी शत्रु होती है, शायद उतना बड़ा शत्रु उसका और कोई नहीं हो सकता।

औरतों की ओर से कानाफूसी प्रारम्भ हो गई -'साँच को आँच कहाँ।' यदि सती हैं तो हाथ में आग के अंगारे लेकर दिखाये। अपने आप दूध का दूध और पानी का पानी हो जायेगा।

समाज के संरक्षक सेठ सिद्धोमल भी औरतों का रुख देखकर उनकी हाँ में हाँ भरने लगे। उन्हें उधर झुकता देख समाज के अध्यक्ष, मंत्री आदि पदाधिकारियों का मत भी उन्हें ही मिल गया।

इस तरह एक ऐसा माहौल बन गया, मानो अग्नि परीक्षा दिये बिना समाज में उनका जिन्दा रहना असंभव हो जायेगा।

संजू और राजू भी यह सब तमाशा देख रहे थे। यद्यपि संजू भी सामाजिक नेताओं के तीर का निशाना बन सकता था, पर बड़े बाप का बेटा होने से उसकी तरफ अंगुली उठाने की किसी की हिम्मत नहीं हो रही थी।

संजू से चुप नहीं रहा गया, अत: वह समाज के सामने आता हुआ बोला-''चलो हमें मंजूर है सुनीता और सरला की अग्नि परीक्षा। और उन्हें दोषी बनाने में उनसे भी कहीं अधिक हमारा दोष है। अ: उनसे पहले हम भी अपनी अग्नि परीक्षा देंगे।''

यह सुनते ही संजू के पिता सेठ सिद्धोमल घबड़ाये। अब उन्होंने पैंतरा बदलने की कोशिश की; पर संजू ऐसा अड़ा कि पलटने का नाम ही न ले। अब सबकी बोलती बन्द। पर संजू ने पुन: घोषणा की कि कल इसी समय यहीं पर अग्नि परीक्षा का कार्यक्रम होगा।

रातभर हलचल मची रही, इस कार्यक्रम के निरस्त करने की नाना योजनायें बनती रहीं। सरला व सुनीता की हर बात मानने को समाज राजी हो गया, पर संजू और राजू अपनी बात पर अड़े रहे।

उनका कहना था कि जब सुनीता व सरला - दोनों ही पूर्ण पवित्र हैं, तो फिर वे किसी की कृपा-पात्र क्यों बनें ? जीवनभर औरतों द्वारा टीका-टिप्पणी की निशाना क्यों बनी रहें ? एक बार अग्नि परीक्षा में खरी उतरकर क्यों न समाज में गौरव से और इज्जत से रहें ? अत: उन्होंने किसी की कोई बात नहीं मानी।

अन्ततोगत्वा, सवेरा होने पर अग्निपरीक्षा की तैयारियाँ प्रारम्भ हुईं। अग्नि की भट्टी जला दी गई; पर सीता की अग्निपरीक्षा से इस अग्निपरीक्षा की कार्यशैली में थोड़ा बहुत सुधार हो गया था, सीताजी को तो अग्निकुण्ड में प्रवेश करना पड़ा था, पर यहाँ आग के अंगारों को केवल हाथों में लेना था; ताकि पापी का पाप तो खुल जाये और जान जोखिम में न पड़े। काश ! उस जमाने में भी कोई ऐसा ही उपाय सोच लेता तो ....। खैर !

जब पूरी तैयारी हो चुकी और सभी समाज एकत्रित हो गया तो संजू ने कहा समाज के संरक्षक, अध्यक्ष, महामंत्री और मंत्री चारों व्यक्ति सामने आवें और क्रम-क्रम से इन अंगारों को अपने हाथ से उठा-उठाकर हम चारों के हाथों पर रखें। **(क्रमश:)**

दशलक्षण महापर्व हेतु सूचना

● दशलक्षण महापर्व के अवसर पर प्रवचनार्थ विद्वानों को बुलाने हेतु पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को आमंत्रण-पत्र समाज/मंदिर/संस्था के लेटर पेड पर शीघ्र भेजें; ताकि समय रहते उचित व्यवस्था की जा सके। पत्र में अपना पूर्ण पता (पिनकोड सहित) एवं फोन नं. (एस.टी.डी. कोड सहित) भेजें एवं तत्काल संपर्क की सुविधा हेतु ई-मेल आई.डी. हो तो अवश्य भेज देवें।

● अनेक बार समाज द्वारा दशलक्षण पर्व के अवसर पर प्रवचन हेतु विद्वानों को अपने यहाँ बुलाने का आमंत्रण अन्तिम समय पर प्राप्त होता है, जिससे व्यवस्था करने में कठिनाई होती है; अत: समाज/मंदिर के व्यवस्थापकों से निवेदन है कि वे अपने यहाँ से आमंत्रण-पत्र तत्काल भिजवायें। संपर्क सूत्र - **दशलक्षण पर्व व्यवस्था विभाग, ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.) 302015 फोन नं.- 0141-2705581, 2707458,**
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

आवश्यकता

योग्य प्रिंसिपल एवं शिक्षकों की आवश्यकता, शीघ्र संपर्क करें - **(L.K.G. to 5th Class & 6th to 12th Class)**

जीवन शिल्प पब्लिक स्कूल एवं जीवन शिल्प इण्टर कॉलेज बानपुर-ललितपुर (उ.प्र.) मोबाइल - 9453661666

आवास एवं भोजन व्यवस्था उपलब्ध, वेतन योग्यतानुसार।

क्या हम सही मार्ग पर हैं ?

सत्य क्या है ? (3)

जो सभी एक दूसरे से भिन्न व परस्पर विरुद्ध हैं, वे सभी तो सच हो नहीं सकते हैं न !

– **परमात्मप्रकाश भारिल्ल** (कार्यकारी महामंत्री–टोडरमल स्मारक ट्रस्ट)

प्रश्न यह है कि अपने धर्म और धार्मिक आस्था का चुनाव यदि इतना महत्वपूर्ण है तो लोग ऐसा करते क्यों नहीं हैं?

संक्षिप्त जवाब है –''क्योंकि आवश्यकता ही महसूस नहीं होती है।''

पर क्यों?

यदि हम सारी दुनिया के लोगों पर नजर डालें तो पायेंगे कि लाखों–करोड़ों में एकाध अपवाद को छोड़कर लगभग सभी लोग वंश परम्परा से प्राप्त धर्म का पालन करते हैं। वे चाहे कोई भी क्यों न हों; अमीर–गरीब, पढेलिखे–अनपढ, बालक या वृद्ध, मॉर्डन या पुरातनपंथी और इस या उस देश के निवासी। यही एक बात सभी में समानरूप से पायी जाती है; और तो और अपने आपको बुद्धिजीवी, अन्वेषक और स्वतंत्र विचारों वाला मानने वाले वैज्ञानिक भी धर्म का नाम आते ही अपनी परम्परा से चिपक जाते हैं। पूर्वापर विरोध वाली सभी मान्यताओं को नजरअंदाज करते हुये भी उससे विमुख नहीं होते हैं।

आखिर ऐसा क्यों होता है?

मेरे कथन पर चौंकिये मत! यदि मैं कहूं कि वे संकीर्ण दृष्टिकोण वाले लोग हैं।

''जिन्दगी चिंता है रोटीदाल की'' की तर्ज पर वे मात्र अपने 'आज' की, क्षणिक आजीविका, स्वास्थ्य, मनोरंजन आदि जैसी छोटी–छोटी आवश्यकताओं के लिये चिंतित रहते हैं और जी–जान से मात्र उन्हीं की पूर्ति करने के प्रयासों में इसप्रकार जुटे रहते हैं कि उन्हें अपने वर्तमान से आगे बढकर कुछ भी विचार करने का अवसर ही नहीं मिलता है।

जिसप्रकार किसी खानदानी दरिद्री के सोच–विचार का दायरा मात्र रोटी–दाल तक ही सीमित होता है, वे उससे ऊपर उठ ही नहीं पाते हैं, उसी प्रकार इस (हम सभी) **'विचारों के दरिद्री' प्राणी की सोच भी रोटी–दाल, भूख–प्यास, कपड़े–लत्ते, सर्दी–गर्मी, खेलकूद–मनोरंजन, मौज–मस्ती और इनके साधन दुकान–मकान, स्कूल–अस्पताल, बाग–बगीचे, नाटक–सिनेमा और नदी–पहाड़ तक ही सीमित बना रहता है। वे कभी इस दायरे से बाहर निकल ही नहीं पाते हैं। आचरण व व्यवहार में भी नहीं और चिन्तन–मनन एवं सोच–विचार के स्तर पर भी नहीं।**

क्यों?

क्योंकि वे सभी संकुचित दृष्टिकोण वाले लोग हैं। वे दूरदर्शी नहीं हैं। **उनकी दृष्टि अपने दीर्घकालीन हितों पर है ही नहीं।** वे तो मात्र अपने 'आज' में मस्त हैं या सिर्फ अपने 'आज' के बारे में चिंतित हैं। उनकी दृष्टि अपने आगामी अनंतकाल पर नहीं है।

इस धरा पर जन्म लेने वाले अधिकतम लोग आजीवन मात्र इसी सीमित दायरे में जीते हैं और मर जाते हैं। कोई यह क्यों नहीं सोचता है कि हम लोग क्या सिर्फ इसी के लिये बने हैं, 'जीने के लिये खाना और खाने के लिये जीना' क्या इसके अतिरिक्त इस जीवन में कुछ है ही नहीं? क्या इस जीवन का कोई अन्य लक्ष्य ही नहीं?

यदि ऐसा ही है तो इस मानव जीवन में और पशु में अंतर ही क्या रहा? वे भी तो दिन–रात मात्र भोजन की जुगाड़ में ही भटकते रहते हैं। **बेचारे जीवनरक्षा के लिये जीवन को खतरे में डालकर भोजन की तलाश में घर से बाहर निकलते हैं, कौन जानता है कि वे शिकार करके लौटेंगे या किसी के शिकार बनकर रह जायेंगे?** आखिर उसी समय उसके शिकारी भी तो शिकार पर निकले हुए हैं।

पशुओं की तो यह दशा तब है जब वे मात्र जीने के लिए खाते हैं। हम जैसे खाने के लिए (भोगों के लिए) जीने वाले लोगों की दुर्दशा का वर्णन करने में भला कौन समर्थ है?

आवश्यकता भी नहीं, हम उससे अपरिचित थोड़े ही हैं, हम सभी तो उसी दौर से गुजर रहे हैं।

हम विषय से थोड़े विषयांतर हो गये।

हमारी उपरोक्त चर्चा का सार यह है कि हम सभी लोग अपनी ऐसी नितान्त क्षणिक, तत्कालीन आवश्यकताओं की पूर्ति में ही सदा व्यस्त रहते हैं जिनकी पूर्ति यदि हम न भी करें तो समय के साथ वे स्वत: ही समाप्त हो जायेंगी।

उदाहरण के लिए मान लीजिये कि हमें खुजली चल रही है, अब हम खुजलाएं या न खुजलाएं, कुछ समय में वह खुजली स्वत: ही शान्त होने वाली है। यूं भी खुजलाना कोई खुजली मिटाने का उपाय नहीं है, खुजली मिटाने का उपाय तो खुजली के कारण को दूर करना है, पर हम उस ओर तो ध्यान ही नहीं देते हैं। हम तो खुजला–खुजलाकर नये (दीर्घकालीन) जख्म और पैदा कर लेते हैं; अब उनका इलाज करो।

क्या करें, हमारी कार्यप्रणाली है ही ऐसी, हमसे बिल्ली तो निकलती नहीं है पर बिल्ली को घर से निकालने के फेर में ऊँट को और घर में घुसा लेते हैं।

हम जीवनभर प्रतिदिन जिन कार्यों को अनिवार्य मानकर प्रतिपल व्यस्त बने रहते हैं, उनमें से अधिकतम कार्य ऐसे ही महत्वहीन हैं।

दाल में चावल मिलाकर फिर बीनते रहने जैसी अनेकों गतिविधियों में लिप्त हम अपने आपको अतिव्यस्त और ऐसी इन्हीं अतिव्यस्तताओं के कारण अपने आपको अतिविशिष्ट मानते हुए हम गौरवान्वित होते हैं।

यदि हम ऐसे तुच्छ से कार्यों में ही उलझे रहने को मजबूर हैं और इनके कारण हमें अपने अविनाशी कल्याण के उपाय करने का समय नहीं मिल पाता है तो यह हमारी दुर्भाग्यपूर्ण मजबूरी है, इसमें इठलाने की क्या बात है?

यदि आपको इन्हीं छोटी–छोटी बातों से खुशी मिलती है तो ऐसा

नहीं है कि इससे मेरे पेट में दर्द होता हो, पर **इसका एक बड़ा नुकसान यह है कि हम कभी इस स्थिति से उबरने का प्रयास ही नहीं करेंगे; क्योंकि उसे तो हम बड़प्पन का प्रतीक और गौरव का विषय मानते हैं। तब हमें अपने त्रैकालिक महत्व के कार्य करने के लिये वक्त कैसे मिलेगा?**

यदि हम इन जंजालों को जंजाल ही मानेंगे तो इनसे बचने का प्रयास करेंगे तो हो सकता है कि एक दिन हम ऐसी स्थिति में पहुंच सकें कि हमें स्वयं हमारे लिये अपने अविनाशी कल्याण के लिये थोड़ा वक्त मिल सके। बस इसीलिये मैं इस बात पर इतना जोर दे रहा हूँ। यदि आप अन्यथा न लें तो एक बात कहूँ।

क्या सचमुच हमें जीवित रहने के लिये इतने अधिक प्रपंचों और जंजाल की आवश्यकता है, क्या इनमें कुछ कटौती की जावे तो जीवन संभव ही नहीं है?

यदि मेरी मानें तो मैं कह सकता हूँ कि जीवन के लिये तो इनमें से मात्र कुछ ही की आवश्यकता है और हमारे 99% साधन तो मात्र ऐसी कृत्रिम आवश्यकताएं हैं जो या तो व्यर्थ की श्रेणी में आती हैं या अतिरिक्त लग्जरी की श्रेणी में।

यूं शायद अचानक आप मेरी बात से सहमत न हों; पर यदि मैं कुछ उदाहरण प्रस्तुत करूँ तो आपको मुझसे सहमत होने के अलावा और कोई विकल्प नहीं रहेगा।

हमारे मुनिराजों का उदाहरण ही ले लीजिये, उनके पास क्या है सिवाय पिच्छी एवं कमण्डलु के; तो क्या उनका जीवन नहीं चलता है? क्या वे सम्पूर्ण जीवन नहीं जीते हैं? आप कह सकते हैं कि आनंदपूर्वक जीवन जीने के लिये तो और भी बहुत कुछ चाहिये।

मैं पूछता हूँ कि मुनिराज क्या आनंद में नहीं रहते हैं?

अरे! उनके पास क्या नहीं था? क्या कमी थी उनके पास? वह सबकुछ छोड़कर वे साधु हुए हैं, तो आनंद के लिये या कष्ट पाने के लिये?

यदि उन सबके साथ वे आनंद में होते तो वे उन्हें त्यागते ही क्यों?

यदि उन सबके बिना वे आज कष्ट में होते तो वे उन्हें त्यागते ही क्यों?

वे कष्ट पाने के लिये साधु हुए हैं या कष्ट दूर करने के लिये? क्या कोई यूं ही इस तरह कष्टों का वरण करता है?

क्या कष्टों का नाम धर्म है?

क्या धर्म का उद्देश्य कष्ट पाना और कष्ट भोगना है या कष्ट भोगने से धर्म होता है?

अरे! मात्र धर्म का फल ही आनंदमय नहीं है, वरन् धर्म स्वयं ही आनंदमय है, आज धर्म धारण करो तो कल सुख मिलेगा ऐसा नहीं है, धर्मधारी तत्क्षण सुखी ही है।

वर्तमान में कष्ट भोगने से भविष्य में सुख मिलेंगे यह धारणा ही मिथ्या है। दु:ख बोओगे तो सुख कैसे मिलेगा?

भला बबूल बोने से कभी आम उगते हैं?

अरे! तुझे सुखी होना है तो भविष्य में सुख पाने की आशा में आज के प्रगट सुखों को तिलांजलि देने में कौनसी समझदारी है? तुझे सुखी ही होना है और तू आज ही सुखी है तो आज के सुखों को त्यागकर कल के सुखों की आशा क्यों करता है? आज ही सुख से रह ना! अरे भोले! **धर्म कोई उधार का धंधा नहीं है, धर्म का फल तो तत्क्षण मिलता है।**

तू कह सकता है कि मुनिराज तो वीतरागी हैं; पर हम जैसे रागियों को तो जीवन चलाने के लिये बहुत कुछ चाहिये, सब कुछ चाहिये।

मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या इस जगत में ऐसे दरिद्री मनुष्य नहीं रहते हैं, जिनके पास रहने को घर नहीं, तन पर वस्त्र नहीं, खाने को भोजन नहीं। क्या ऐसे लोग भी इन सबके बिना ही अपना सम्पूर्ण जीवन नहीं जीते हैं?

जब एक मनुष्य का जीवन इन सबके बिना चल सकता है तो सबका क्यों नहीं?

प्राचीनकाल में जब आवागमन के साधन नहीं थे तब क्या हम मनुष्य भी अपने जन्मस्थल से एक सीमित दायरे में ही बने रहकर सफलतापूर्वक अपना सारा जीवन व्यतीत नहीं कर लेते थे?

प्राचीनकाल में आज की अपेक्षा अत्यंत नगण्य साधन उपलब्ध थे, तब क्या जीवन नहीं चलता था, क्या कमी थी उनके जीवन में? क्या वे हमसे ज्यादा सुखी और संतुष्ट नहीं थे?

तब हमें ही क्या आवश्यकता है कि हम सारी दुनिया नापते फिरें। क्या हमारी भी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति अपने निवास के कुछ ही किलोमीटर के दायरे में रहकर नहीं हो सकती है?

अरे! मनुष्य ही क्या, पशु भी तो इन सबके बिना ही अपना सम्पूर्ण जीवन सफलतापूर्वक जीते ही हैं ना! क्या बिना कुछ भी संग्रह किये जीवनभर अपने जन्म स्थान से मात्र कुछ ही किलोमीटर के दायरे में रहते हुए ही उनके जीवन की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति सामान्य तरीके से नहीं हो जाती है?

मेरे कहने का तात्पर्य मात्र इतना ही है कि **इस जीवन को बनाये रखने के लिये अनिवार्य आवश्यकताएं अत्यंत सीमित हैं, हमें उन्हें सीमित ही बनाए रखकर, अत्यंत सीमित समय में ही अपने जीवनयापन के साधन जुटाकर शेष समय का उपयोग अपने अविनाशी, शाश्वत, त्रैकालिक अलौकिक सुख के साधन हेतु करना चाहिये।** ऐसा सिर्फ वही कर सकता है जो अपने आत्मा के त्रैकालिक स्वरूप को जाने और सच्चे शाश्वत सुख के स्वरूप को पहिचाने।

जिसे आत्मा के शाश्वत स्वरूप का भरोसा होगा, वही उसके शाश्वत कल्याण के लिये प्रेरित होगा और उसे आवश्यकता महसूस होगी अपने आगे की व्यवस्थाओं में से समय की कटौती करके यह कार्य करने की।

हममें से अधिकतम लोग ऐसे नहीं हैं और इसीलिये अन्य किसी विकल्प के अभाव में वे मात्र अपनी आज की समस्याओं में ही उलझे रहकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं, ऐसे में उन्हें किसी ऐसे वास्तविक धर्म की आवश्यकता ही महसूस नहीं होती है जो उन्हें शाश्वत सुख दिला सके। इसप्रकार वे धर्म के क्षेत्र में जहाँ हैं, जैसे हैं की नीति पर चलते हुए ही अपना जीवन व्यतीत कर देते हैं। **(क्रमश:)**

आगम के आलोक में –

समाधिमरण या सल्लेखना

2

–डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

अकेले शरीर को कृष करना ही सल्लेखना नहीं है, अपितु शरीर के साथ-साथ कषायों को कृश करना भी आवश्यक है।

सम्यक् काय कषाय लेखना सल्लेखना[1] – आचार्य पूज्यपाद के इस कथन के अनुसार शरीर और कषायों को भलीभाँति कृश करना ही सल्लेखना है।

सागारधर्मामृत में पण्डित आशाधरजी लिखते हैं –

''उपवासादिभिः कायं कषायं च श्रुतामृतैः।
संलिख्य गणमध्ये स्यात् समाधिमरणोद्यमी।।१५।।

समाधिमरण के लिए प्रयत्नशील साधक उपवास आदि के द्वारा शरीर को और श्रुतज्ञानरूपी अमृत के द्वारा कषाय को सम्यक् रूप से कृश करके चतुर्विध संघ में उपस्थित होवे। अर्थात् जहाँ चतुर्विध संघ हो वहाँ चला जाये।''

उक्त छन्द में शरीर को कृश करने का उपाय उपवास आदि को और कषायों को कृश करने का उपाय श्रुताभ्यास (स्वाध्याय) को बताया है साथ में चतुर्विध (मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका) संघ के सत्समागम में रहने को कहा है।

इससे यह स्पष्ट है कि – यह सब कथन घर में रहनेवाले व्रती श्रावकों का ही है।

''जन्ममृत्युजरातङ्काः कायस्यैव न जातु मे।
न च कोऽपि भवत्येष ममेत्यङ्गेऽस्तु निर्ममः।।[2]

जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा और रोग शरीर में ही होते हैं, मुझ (आत्मा) में नहीं। अतः मुझे इस शरीर में निर्मम होना चाहिये।

पिण्डो जात्याऽपि नाम्नाऽपि समो युक्त्याऽपि योजितः।
पिण्डोऽस्ति स्वार्थनाशार्थो यदा तं हापयेत्तदा।।[3]

पिण्ड शरीर को भी कहते हैं और भोजन को भी। इसप्रकार शरीर और भोजन में जाति और नाम दोनों से समानता है; फिर भी आश्चर्य है कि अबतक शरीर को लाभ पहुँचाने वाला भोजन, अब शरीर को हानि पहुँचाता है; इसलिये भोजन का त्याग ही उचित है।''

उक्त कथन से अत्यन्त स्पष्ट है कि जब भोजन शरीर को पोषण न देकर शरीर का शोषण करने लगे, शरीर को नुकसान पहुँचाने लगे; तब उसका त्याग करना चाहिये।

ध्यान रहे यहाँ यह कहा जा रहा है कि **जब भोजन शरीर को नुकसान पहुँचाने लगे, उसका त्याग तब करना चाहिये।**

महाशास्त्र तत्त्वार्थसूत्र में भी आचार्य उमास्वामी ने अणुव्रतधारी श्रावकों को मुख्यरूप से व अन्य मुमुक्षु भाई-बहिनों को गौणरूप से आदेश दिया है, उपदेश दिया है कि–

''मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता।।[1]

मरणकाल उपस्थित होने पर सल्लेखना (समाधिमरण) व्रत का श्रावकों को प्रीति पूर्वक सेवन करना चाहिए।''

उपसर्गादि के होने पर तो सल्लेखना होती ही है। सहज मृत्युकाल उपस्थित होने पर जीवन के अन्त में भी सल्लेखना धारण करना आवश्यक है।

आचार्य अमृतचन्द्र देव अपने पुरुषार्थसिद्ध्युपाय नामक श्रावकाचार में इस बात पर विशेष बल देते हैं कि यह सल्लेखना नामक व्रत ही एक ऐसा व्रत है कि जो तेरे धर्मरूपी धन को अगले भव में ले जावेगा।

यद्यपि यह सल्लेखना नामक व्रत जीवन के अन्त में लिया जाता है; तथापि इस व्रत को लेने की भावना बहुत पहले से रखी जा सकती है और रखी जानी चाहिये।

अतः यह न केवल मृत्यु को सुगंधित करने वाला व्रत (कार्य) है, परन्तु यह जीवन को भी भावना के बल पर सुगन्धित कर देता है।

उक्त कथन करने वाले छन्द मूलतः इसप्रकार हैं –

''इयमेकैव समर्था धर्मस्वं मे मया समं नेतुम्।
सततमिति भावनीया पश्चिमसल्लेखना भक्त्या।।
मरणान्तेऽवश्यमहं विधिना सल्लेखनां करिष्यामि।
इति भावनापरिणतोऽनागतमपि पालयेदिदं शीलम्।।[2]

यह सल्लेखना ही एकमात्र ऐसा व्रत है, जो मेरे धर्म को अगले भव में ले जाने में समर्थ है; अतः निरन्तर इसकी भावना करना चाहिये।

मैं मरण के समय अवश्य ही सल्लेखना धारण करूँगा – ऐसी भावना रखकर ज्ञानी जीव मरण समय के पहले ही इस व्रत का लाभ ले लेता है।''

देह तो पुद्गलपरमाणुओं का पिण्ड है। पुद्गल परमाणु तो समय आने पर यहीं बिखर जावेंगे, पर मैं तो अनादि अनन्त

१. सर्वार्थसिद्धि अध्याय-७, सूत्र २२ की टीका में समागत।
२. धर्मामृत (सागार) आठवाँ अध्याय, छन्द १३ ३. वही, छन्द १४

१. तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय-७, सूत्र २२
२. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय छन्द-१७५-१७६

अविनाशी तत्त्व हूँ; अतः मैं तो अगले भव में भी रहने वाला हूँ। मेरा धर्म भी मेरे साथ रहने वाला है। अतः हमें देह के बारे में, धन-सम्पत्ति के बारे में न सोच कर अपने आत्मतत्त्व के बारे में सोचना चाहिये, अपने आत्मतत्त्व की संभाल में ही सावधान होना चाहिये।

उक्त छन्दों में आचार्य अमृतचन्द्र हमें यही आदेश देना चाहते हैं, यही उपदेश देना चाहते हैं।

इस सल्लेखना व्रत का वर्णन श्रावकाचारों में आता है। दूसरी प्रतिमा में १२ व्रतों की चर्चा के उपरान्त इसका निरूपण होता है।

पण्डित प्रवर आशाधरजी भी इस सल्लेखना व्रत की चर्चा अनगार धर्मामृत में न करके सागारधर्मामृत में करते हैं। सातवें अध्याय में व्रती श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का वर्णन करने के उपरान्त आठवें अध्याय में सल्लेखना की बात करते हैं।

आशाधरजी श्रावकों के तीन भेद करते हैं - १. पाक्षिक, २. नैष्ठिक और ३. साधक।

जिसे जैनदर्शन का पक्ष है, वह पाक्षिक श्रावक है और जिसकी निष्ठा जैनदर्शन में है, वह नैष्ठिक श्रावक है। जैनदर्शन की साधना करने वाला श्रावक साधक श्रावक है।

अव्रती सम्यग्दृष्टि पाक्षिक श्रावक है और ग्यारह प्रतिमाओं को धारण करनेवाला, उनका निष्ठापूर्वक पालन करनेवाला नैष्ठिक श्रावक है। समाधिपूर्वक मरण का वरण करनेवाला अर्थात् सल्लेखना धारण करनेवाला साधक श्रावक है। इसप्रकार यह सुनिश्चित ही है कि यह व्रत व्रती श्रावकों का व्रत है।

आचार्य समन्तभद्र द्वारा रचित रत्नकरण्ड श्रावकाचार के छठवें अध्याय में सल्लेखना की चर्चा करने के उपरान्त सातवें अध्याय में ग्यारह प्रतिमाओं की बात करते हैं।

सबकुछ मिलाकर ग्यारह प्रतिमायें और उनमें समागत बारह व्रतों के इर्द-गिर्द ही समाधिमरण (सल्लेखना) की चर्चा की जाती रही है।

इससे भी यह सिद्ध होता है कि **यह मुख्यरूप से पंचमगुणस्थानवर्ती व्रती श्रावकों का व्रत है।** साधु तो सदा समाधिस्थ ही रहते हैं; उनका सम्पूर्ण जीवन समाधिमय है और जिनका जीवन समाधिमय होता है; उनका मरण भी नियम से समाधिमय होता ही है।

समाधिमरण की चर्चा में माता-पिता, पत्नी-पुत्र आदि कुटुम्बीजनों से आज्ञा लेना, क्षमायाचना करना मुनिराजों के कैसे संभव है? सभी कुटुम्बीजनों को संपत्ति बाँटने की बात भी कैसे संभव है; क्योंकि वे तो यह सब दीक्षा लेते समय ही कर चुके हैं।

अव्रती के जब कोई व्रत नहीं है तो फिर यह व्रत भी मुख्यरूप से कैसे हो सकता है? सामान्यरूप से तो सभी ज्ञानी-अज्ञानी मृत्यु समय सावधानी की अपेक्षा रखते ही हैं और रखना भी चाहिये।

आचार्य श्री **अमितगति** द्वारा रचित **मरणकण्डिका** नामक ग्रन्थ, आचार्य **शिवार्य** द्वारा प्राकृत भाषा में लिखी गई **भगवती आराधना या मूल आराधना** का संस्कृत रूपान्तर है। उसमें आचार्यदेव ने पाँच प्रकार के मरणों की चर्चा की है; जो इसप्रकार हैं -

(१) बाल-बालमरण (२) बालमरण (३) बाल पण्डितमरण (४) पण्डितमरण और (५) पण्डित-पण्डितमरण।

(१) मिथ्यादृष्टियों के मरण को बाल-बालमरण कहते हैं।

(२) अविरत सम्यग्दृष्टियों के मरण को बालमरण कहते हैं।

(३) प्रतिमा-धारियों और आर्जिकाओं के मरण को बाल पण्डितमरण कहते हैं।

(४) मुनिराजों के मरण को पण्डितमरण कहते हैं।

(५) अरिहंतों के निर्वाण को पण्डित-पण्डितमरण कहते हैं।

गुणस्थान परिपाटी के अनुसार प्रथम गुणस्थानवालों का मरण **बाल-बालमरण** है। चतुर्थ गुणस्थानवालों का मरण **बालमरण** है। पंचम गुणस्थानवालों का मरण **बाल पण्डितमरण** है। छठवें से ग्यारहवें गुणस्थानवालों का मरण **पण्डितमरण** है और तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान वालों का निर्वाण **पण्डित-पण्डितमरण** कहा जाता है।

प्रस्तुत कृति में उक्त पाँच मरणों में मात्र दूसरे और तीसरे मरण को अर्थात् चौथे और पाँचवें गुणस्थानवालों के समाधिमरण या सल्लेखना को विषय बनाया गया है।

अतः हम कह सकते हैं कि हमारी इस कृति का विषय मात्र अव्रती और अणुव्रती सम्यग्दृष्टियों की सल्लेखना है।

ध्यान रहे बारह व्रतों में अतिचारों की चर्चा के साथ ही सल्लेखना के अतिचार भी गिनाये हैं। यह भी सिद्ध करता है कि **यह सल्लेखना नामक व्रत मुख्य रूप से व्रती श्रावकों का है।**

(क्रमशः)

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो, प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें-
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

बाल एवं युवा जैन संस्कार शिविर संपन्न

(1) शाहगढ (म.प्र.) : यहाँ एक्सीलेन्स स्कूल में दिनांक 8 से 13 जून तक बाल एवं युवा जैन संस्कार शिक्षण शिविर का समापन समारोह संपन्न हुआ।

दिनांक 13 जून को समापन समारोह के अवसर पर अध्यक्षता श्री सेठ बाबूलालजी शाहगढ ने की। विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री सीएमओ सर मिथलेशजी गिरि, श्री दामोदरजी सेठ, श्री पदमजी सेठ, श्री विनोदजी डेवडिया शाहगढ, श्री पदमचंदजी पनवारीवाले घुवारा आदि महानुभाव एवं समस्त विद्वत्गण मंचासीन थे। सभी का सम्मान अ.भा. जैन युवा फैडरेशन एवं मुमुक्षु मण्डल शाहगढ के पदाधिकारियों द्वारा किया गया। कार्यक्रम का मंगलाचरण घुवारा एवं शाहगढ के बच्चों द्वारा नृत्य के माध्यम से किया गया। स्वागत भाषण शिविर के मुख्य संयोजक अमितजी जैन अरिहंत मडावरा ने दिया एवं पण्डित निलयजी शास्त्री बरायठा ने शिविर की उपयोगिता पर अपने विचार रखे। शिविर के संयोजक अमित जैन अरिहंत, अनुराग शास्त्री, देवांश सेठ, संदीप शास्त्री थे। सभा का संचालन पण्डित सचिनजी शास्त्री सागर ने किया।

(2) टीकमगढ (म.प्र.) : यहाँ ज्ञान मन्दिर में दिनांक 8 से 16 जून तक 13वाँ बाल शिक्षण शिविर संपन्न हुआ।

इस अवसर पर ब्र.श्रेणिकजी जबलपुर, पण्डित यशजी करेली ध्रुवधाम एवं स्थानीय विद्वानों द्वारा प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ मिला। शिविर में शताधिक बच्चों ने जैनधर्म के संस्कार ग्रहण किये। रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम भी हुये। शिविर के संयोजक श्री रोहित वैशाखिया गुड्डू, श्री अंकितजी वैद्य, श्री सुजयन्तजी जैन थे। शिविर के बीच में एक दिन पण्डित राजकुमारजी शास्त्री उदयपुर ने शाश्वतधाम का परिचय एवं आमंत्रण भी दिया। **– संजय जैन हल्ले, टीकमगढ**

फ्लोरिडा (U.S.A.) में अभूतपूर्व धर्मप्रभावना

1. मयामी : यहाँ जैन सेन्टर ऑफ साउथ फ्लोरिडा में दिनांक 26 मई से 1 जून तक डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के प्रतिदिन प्रात: कर्म की दस अवस्थाओं पर मार्मिक प्रवचन हुये तथा सायंकाल तत्त्वार्थसूत्र के प्रथम अध्याय पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला।

विशेष बात यह है कि यहाँ दिनांक 30 मई को श्रुतपंचमी पर्व के अवसर पर प्रासंगिक प्रवचन हुआ। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि इससे पहले यहाँ कभी इस पर्व के बारे में चर्चा भी नहीं हुई। अधिकतम लोगों ने तो श्रुतपंचमी का नाम भी नहीं सुना था।

2. ऑरलेन्डो : यहाँ ओल्ड एज कम्यूनिटी, शांति निकेतन में दिनांक 2 से 5 जून तक डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा प्रथमबार किसी जैन विद्वान के प्रवचन हुये। सभा में जैन-अजैन सभी लोगों के बीच ईश्वर के अकर्त्तावाद एवं द्रव्य-गुण-पर्याय के स्वरूप पर मार्मिक प्रवचन हुये।

श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा

ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में

40वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर

(रविवार, दिनांक 23 जुलाई से मंगलवार 1 अगस्त, 2017 तक)

शिविर में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल एवं अन्य अनेक विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा।

शिविर में जयपुर आने हेतु अपने टिकिट शीघ्र करा लेवें। कृपया आवास आदि की समुचित व्यवस्था हेतु अपने पधारने की पूर्व सूचना जयपुर कार्यालय को अवश्य भेजें।

शिविर में पधारने हेतु आप सभी सादर आमंत्रित हैं।

संपर्क सूत्र – पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.) फोन : 0141-2705581, 2707458

वैराग्य समाचार

सागर (म.प्र.) निवासी मैसर्स भगवानदास शोभालाल जैन बालक बीड़ी परिवार के वरिष्ठ सदस्य **श्रीमंत सेठ मानक दादाजी** का दिनांक 6 जून को देहावसान हो गया।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो - यही मंगल भावना है।

प्रकाशन तिथि : 28 जून 2017

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
सह-सम्पादक : **डॉ.संजीवकुमार गोधा,** एम.ए.द्वय, नेट, एम.फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी. एवं **पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल**
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें –
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com